International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 236-238

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 236-238
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 28-10-2020
Accepted: 09-12-2020

डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय ठियोग, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय ठियोग, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

पुराणानुसार गणेश–पूजा–विधि

डॉ० मोहन लाल

सारांश :–
जो मनुष्य सकल नान्दीमुखों में गणाधीश की पूजा करता है, सब कुछ उसके वश में हो जाता है तथा वह अक्षय पुण्य को प्राप्त करता है। भविष्यपुराणानुसार न कोई तिथि, न नक्षत्र और न किसी उपवास का विशिष्ट विधान है। यथेष्ट चेष्टापूर्वक सर्वदा ही कामिका सिद्धि होती है। प्राचीन भारत के धार्मिक जीवन मे गणेश का विशेष महत्त्व होने के कारण गरुड़पुराण में अन्य देवी–देवताओं सहित उनकी अर्चना का भी उल्लेख आया है। पद्म, शिव, नारद, भविष्य, स्कन्द, मत्स्य और गरुड़पुराणों में गणेश–पूजा–विधि वर्णित है।

सारः– गणेश–पूजा, नान्दीमुखों, देवी–देवताओं

प्रस्तावना

पद्मपुराण

पद्म–पुराण के सृष्टि–खण्ड में गणेश–पूजा–विधि का वर्णन प्राप्त होता है। व्यास के गणाधिप–पूजन के माहात्म्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि जो सकल नान्दीमुखों में गणाधीश की पूजा करता है, सब कुछ उसके वश में हो जाता है तथा वह अक्षय पुण्य को प्राप्त करता है। गणानां त्वा– इस मंत्र द्वारा नर सभी यज्ञवटों में सर्व–सिद्धि को प्राप्त कर लेता है तथा स्वर्ग और मोक्ष–प्राप्ति का पात्र बनता है। उन्होंने पूजाविधि का वर्णन करते हुए कहा कि बुद्धिमान् मनुष्य द्वारा मृत्तिका की प्रतिमा या चित्र अथवा पाषाण, द्वारकाष्ठ और पात्र पर हेरम्ब को चित्रित करना चाहिए। उसके द्वारा अन्य किसी भी सतत दृष्टि–गोचर होने वाले स्थान पर हेरम्ब को स्थापित करके यथाशक्ति पूजन किया जाना चाहिए तो उसके सभी अभीष्ट कार्य सिद्ध हो जाते हैं। सर्वत्र विघ्नों का अभाव होता है तथा त्रैलोक्य वश में हो जाता है। विद्यार्थी वेदशास्त्रसमुद्भव विद्या तथा अन्य शिल्पिविद्या और स्वर्गदायिनी विजय को प्राप्त करते हैं। धनार्थी प्रचुर धन, ऐश्वर्य, साध्वी तथा मनोरमा कन्या तथा धर्मसाध्य और कुल को मोक्ष प्रदान करने वाले पुत्र की प्राप्ति करता है। तदुपरान्त उन्होंने कहा कि गणेश–पूजन के प्रभावशात् नर कभी भी रोगों से पीड़ित नहीं होता तथा ना ही ग्रहों या प्रेत–योनियों अथवा शृंगियों, राक्षसों, विद्युत् और वनतस्करों से उस पर राजा भी कुपित नहीं होता। उसके गृह में न तो महामारी आती है, न ही दुर्भिक्ष और न दुर्बलता।[1]

शिवपुराण

शिवपुराण में ऋषियों ने सूत से सर्वाभीष्टप्रद पार्थिव प्रतिमा पूजा–विधि को बतलाने हेतु जिज्ञासा व्यक्त की। सूत ने उन ऋषियों को बतलाया कि उनके द्वारा पृष्ट प्रश्न श्रेष्ठ था क्योंकि पार्थिव पूजा–विधान सर्वदा सर्वार्थदायक, शीघ्रतापूर्वक दुःखशमन का हेतु, अपमृत्यु एवं अकालमृत्यु का विनाशक, सद्यः कलत्र, पुत्र और धनों का प्रदाता, अन्नादि भोज्यपदार्थ और वसनादि सभी को उत्पन्न करने वाला था। पुरुष एवं नारी का निश्चितरूपेण मृत्तिकादि से निर्मित प्रतिमा पूजा– सम्पादन का अधिकार है जिससे भूलोक में सभी कामनाओं की प्राप्ति होती है। उस प्रतिमा के निर्माण–हेतु नदी, तालाब, कूप अथवा जलांत प्रदेश से मिट्टी लाई जानी चाहिए जिसका संशोधन करने के अनन्तर सुगन्धित द्रव्यों के चूर्ण के साथ पीस कर सुमण्डप में उस मिट्टी से निज करों से प्रतिमा का निर्माण करना चाहिए। तदनन्तर दुग्ध से सुसंस्कृत तथा अंग–प्रत्यंगों और आयुधों से समन्वित प्रतिमा को कमलासन पर स्थित करके आदरसहित पूजन करना चाहिए। ब्राह्मण के लिए सर्वदा गणेश, दिवाकर, लक्ष्मीपति, पार्वती और शिव की प्रतिमा और शिव के शिवलिङ्ग की अर्चना की जानी चाहिए। षोडशोपचार से पूजा करने से ही मनुष्य के मनोरथ सिद्ध होते हैं। पुष्पों से प्रोक्षण तथा मन्त्रपूर्वक अभिषेक किया जाना चाहिए।[2] अभिषेक से आत्मशुद्धि, गंध अर्पित करने से पुण्य, नैवेद्य से आयु तथा तृप्ति और धूपदान से धन, दीप से ज्ञान और ताम्बूल से भोग की प्राप्ति होती है। अतएव स्नानादिकषट्क प्रयत्नसहित साधने चाहिए। नमस्कार और जप दोनों ही सर्वाभीष्टप्रदायक होते हैं, अतः भोग एवं मोक्ष के इच्छुक जनों द्वारा पूजा के अंत में इन दोनों का सम्पादन करना चाहिए। मन से सम्यग्रूपेणार्चन करने से पूर्व भी मनुष्य द्वारा यह सब कुछ सदैव किया जाना चाहिए। प्रस्तुत पुराणासुार देवार्चना से वह तत्तत् देवलोक को जाता है एवं अवान्तर लोक में भी यथेष्ट भोग–प्राप्ति करता है।[3]

नारदपुराण

नारदपुराण में श्रीसनत्कुमार ने नारद को गणेश के सर्वेष्टप्रदायक मंत्रों के विषय में बताया जिनका आराधन करके साधक भुक्तिमुक्तिमान् होता है।

अव्ययो विष्णुवनिता शंभुस्त्री मीनकेतनः।।
स्मृतिर्मासेन्दुमन्वाढ्या सा पुनश्चन्द्रशेखरा।।
ङेतो गणपतिस्तोयं भुजंगो वरदेति च।।
सर्वान्ते जनमुच्चार्य ततो मे वशमानय।।
वह्निन प्रियांतो मंत्रोऽयमष्टाविंशतिवर्णवान्।।[4]

इस (मन्त्र) का विनियोग गणपति–प्रीति–हेतु किया जाता है। इसका मुनि गणक, निचृदादि गायत्री छन्द, देवता गणेश और बीज उनकी षष्ठशक्तियाँ हैं। श्रेष्ठ साधक द्वारा ऋषि को शिर में, छन्द को मुख में, देवता को हृदय में, बीज को गुह्य में तथा शक्ति को पादों में न्यस्त करना चाहिए। जिस (पूर्णवर्णित) मंत्र को मन्त्रज्ञ द्वारा षड्दीर्घाढ्य बीज से तथा पुनः बीजादि द्वारा इसके जातियुक्त षडंगों को न्यस्त करना चाहिए। षडंगक में ही शैवी षडंगमुद्रा का न्यास करना चाहिए। गामाद्य और भूर्लोक को क्रमशः नाभि के भीतर और पादों में न्यस्त करना चाहिए तथा गीमाद्य एवं भुवर्लोक को क्रमशः कंठ तथा नाभि में। स्वर्लोक एवं गूमाद्य क्रमशः कंठादि तथा मस्तकावधि हैं। भुवनाभिध यह न्यास मूलमन्त्र से व्यापक करना चाहिए। मूल मन्त्र का सम्यक् उच्चारण करने के उपरान्त माातृकावर्ण का कथन करना चाहिए। मातृकास्थल पर उसके अंत में भी मूल होना चाहिए जिस के अंत में नमः हो। सुधी द्वारा क्षांत का विन्यास करके मूल के द्वारा व्यापक की रचना की जानी चाहिए। एवंविधिना कृत वर्णन्यास के आख्यान के अनन्तर पदन्यास का वर्णन भी प्राप्त होता है। मूल गायत्री से प०चत्रिबाणवौंइंदु और चंद्राक्षिनिगमों द्वारा क्रमेण विभक्त हृदंत अष्ट पदों से मस्तक, मुख, कण्ठ, हृदय, नाभि, उरु, जानु और पादों में विनयस्त करके मूल के द्वारा व्यापक कर देना चाहिए।[5]

तत्पश्चात् (गणेश की मूलगायत्री में) तत्पुरुषाय और वक्रतुण्डाय शब्दों कें अंत में क्रमशः विद्महे एवं धीमहि पदों तथा पुनः तन्नो दन्तिः शब्दों के अंत में प्रचोदयात्–वर्णों का उच्चारण करना चाहिए।[6] यह मूलगायत्री सर्वसिद्धिप्रदायिनी कही गयी है। इस प्रकार न्यासविधि को करके उन गणेश देव का हृदयपद्म में ध्यान करना चाहिए जो कि उदित होते हुए सूर्य के समान, लोक की स्थिति और अंत के कारणभूत, शक्तिसंज्ञकायुधयुक्त, दंतचक्रादि आयुधों से समन्वित और भूषित अंगों वाले हैं। उनका इस प्रकार ध्यान करके चार लाख 44 सहस्रसंख्यक मंत्रों का जाप करना चाहिए। अष्टद्रव्यों द्वारा दशांशतः मंत्री द्वारा विधिवत् सुसंस्कृत हव्यवाहन (अग्नि) में हवन किया जाना चाहिए। इक्षु, सत्तू, मोचाफल, चिपिट, तिल, मोदक, नारिकेल तथा लाजा (खील) – यह द्रव्याष्टक कथित है। उस पीठ और आधारशक्त्यादिपरतत्त्वा की अर्चना करने के उपरान्त मध्य में षट्कोण और त्रिकोण तथा बाहर अष्टदल की रचना करनी चाहिए। उस के बाह्यभाग में भूपुर की रचना करके वहाँ गणेशपूजन किया जाना चाहिए। तत्पश्चात् तीव्राख्या ज्वालिनी नंदा भोगदा कामरूपिणी। उग्रा तेजोवती सत्या नवमी विघ्ननाशिनी सर्वादिशक्तिकमलासनाय– यह हृदयान्तिक पीठमन्त्र है जिस से उत्तमासन प्रदान करना चाहिए। वहाँ मध्य में गणाधीश के आवाहन के पश्चात् यत्नपूर्वक सम्यक् पूजन करके त्रिकोण के बाह्य भाग में क्रमपूर्वक पूर्वादि चारों दिशाओं में लक्ष्मी तथा लक्ष्मीपति हरि, गौरी एवं शंकर, रति और कामदेव तत्पश्चात् महीपूर्व पोत्री की क्रमशः बिल्व, वट, अश्वत्थ और प्रियंगु वृक्षों के नीचे अर्चना करनी चाहिए। करद्वयस्थितपद्मधारिणी रमा और शंखचक्रधारी हरि, पाशांकुशधरा पार्वती एवं टंकशूलधारी महादेव, पद्महस्ता रति तथा पुष्पवाणचापधर्त्ता कामदेव, शूकव्रीहि–अग्रहस्ता भूमि और चक्रगदाधारी पोत्री की स्तुति करनी चाहिए।[7] पूजाक्रम में देवों में सर्वप्रथम लक्ष्मीसहित विनायक की अर्चना करनी चाहिए।[8] आमोदादि का निज प्रियाओं सहित षट्कोणों में पूजन होना चाहिए। सिद्धिसंयुक्त आमोद की अग्र भाग में, प्रमोद की समृद्धिसहित अग्निकोण में, कीर्तियुक्त सुमुख की ईशकोण में, मदनावतीसंयुत दुर्मुख की वारुण में, नैऋत्य कोण में मदद्रवायुत विघ्न की और द्राविणी के विघ्नकर्त्ता की वायुकोण में सम्यग्रूपेण अर्चना की जानी चाहिए। पाशांकुशधारी और अभय प्रदान करने वाले कर–समन्वितों, तरुण सूर्य सदृश कान्तियुक्तों तथा कपोलों से टपकने वाले मदजल की गंध के लोभी भ्रमरों से शोभित गणपतियों की षट्कोण के उभयपार्श्वों में क्रूमपूर्वक शंख और पद्मतुल्य निज शक्तियों सहित ध्यान कर पूर्ववत् ही आराधना करनी चाहिए। केसरों में षडंगों, पत्रों में अष्ट मातृकाओं तथा धरणीगृह में इन्द्रादियों की भी तथा वज्रादियों की पूजा की जानी चाहिए। एवंविध आराधना करके तथा विघ्नेश की अर्चना करके मनोरथों को साधना चाहिए।[9]

भविष्यपुराण

भविष्यपुराण में शतानीक ने गकाराक्षरदेव महात्मा गणेश की सांग एवं मन्त्रसहित पूजाविधि के विषय में बताने हेतु सुमंतु से कहा जिन्होंने बताया कि एतदर्थ न कोई तिथि, न नक्षत्र और न किसी उपवास का विशिष्ट विधान है। यथेष्ट चेष्टापूर्वक सर्वदा ही कामिका सिद्धि होती है। बुद्धिमान् नर को श्वेतार्कमूल को संगृहीत कर उससे अंगुष्ठपर्वमात्र गणपति निर्मित करने के पश्चात् उन्हें कमलासनस्थ, चतुर्भुज, त्रिनेत्र, सर्वाभरणालंकृत, नागयज्ञोपवीतांग समन्वित और मस्तक पर चन्द्रधर्ता बनाना चाहिए। सव्य हस्त में दशन, द्वितीय में अक्षसूत्रक, तृतीय में परशु और चतुर्थ में मोदक न्यस्त करने चाहिए। कुंकुम और चन्दन भी समालम्भन कथित हैं। वसनों, आभूषणों और रक्त मालाओं से गणपति की आराधना करनी चाहिए। सुगन्धित धूप एवं मोदकों से उनकी अर्चना की जानी चाहिए। एवंविध बुद्धिमान् मानव द्वारा सर्वप्रथम उनकी अग्रपूजा करने के पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिए। द्विज के समक्ष वामन और कुब्ज भोजन खिलाना चाहिए। तत्पश्चात् उस (द्विज) से आशीर्वाद प्राप्त कर मानव को सिद्धि प्राप्त करनी चाहिए।[10]

स्कन्दपुराण

स्कन्दपुराण में गणेशमाहात्म्य वर्णन प्राप्त होता है। महर्षि सनत्कुमार ने व्यास से कहा कि जब लड्डुक देवगणों के द्वारा विघ्नेश्वर की पूजा–अभ्यर्चना सम्पादित की गई थी, तब से विघ्नों के स्वामी गणेश ने लड्डुकप्रिय नाम्ना ख्याति को प्राप्त कर लिया। किस विधि से गणेशार्चना की जानी चाहिए। इसका वर्णन करते हुए महर्षि ने कहा कि गणेश की भक्ति करने वाले को चतुर्थी तिथि के अवसर पर निशाकाल में एकदा भोजन करके विशेषरूपेण शिप्रा में स्नान करना चाहिए। रक्ताम्बर धारण करने के पश्चात् लाल प्रसूनों और रक्तचन्दन –मिश्रित जल से मन्त्रोच्चारण करते हुए स्नान करवा कर लाल चन्दन से विनायक के शरीर पर विलेपन लगाकर उनकी अर्चना की जानी चाहिए। तदनन्तर लम्बोदर को अतिसुगन्धित धूप तथा नैवेद्य में घी और खाँडमिश्रित लड्डू समर्पित किए जाने चाहिए।[11]

मत्स्यपुराण

मत्स्यपुराण में सर्वप्रथम गणेश–वर्णन तड़ागाराम–कूपादि– प्रतिष्ठा–विधि–वर्णन के प्रसंग में प्राप्त होता है। इसके वर्णनानुसार मन्त्रों का आश्रय लेकर वारुणी दिशा के मध्य हरि, हर और ब्रह्मा की स्थापना के अनन्तर कमला तथा अम्बिकासहित विघ्ननाशकर्त्ता विनायक को विशेषरूपेण न्यस्त किया जाना चाहिए।[12] इसी पुराण के ग्रह–शान्ति–वर्णन में भी विनायकावाहन अपेक्षित है।[13] इसी में अन्यत्र विनायकार्थ ''चानूनम्'' इत्यादि मन्त्र उदाहृत है।[14] मत्स्यपुराण के भव–माहात्म्य– वर्णन में शंकर द्वारा अन्धक को गणेशत्व पद प्रदान किए जाने का वर्णन प्राप्त होता है।[15] तीर्थ–वर्णन– प्रसंग में भारभूतिसंज्ञक तीर्थ में स्नान करने में गणेश्वरी (गणेश–सम्बन्धिनी) गति की प्राप्ति की उल्लेख आया है।[16] देवाकार–प्रमाण–वर्णन में उमादेवी के उभय पार्श्वों में जया और विजया तथा स्कन्दस्वामी और विघ्नविनाशक विनायक को दर्शाने का निर्देश किया गया है।[17]

गरुड़पुराण

प्राचीन भारत के धार्मिक जीवन मे गणेश का विशेष महत्त्व होने के कारण गरुड़पुराण में अन्य देवी–देवताओं सहित उनकी अर्चना का भी उल्लेख आया है।[18] इसके प्रारम्भ में जिन देवताओं की वंदना का वर्णन प्राप्त होता है, उनमें गणाधिप का नाम भी परिगणित है।[19] गणों की पूजा को स्वर्गप्रदायिनी मानकर गणाधिप की अर्चना का विधान किया गया है।[20] गरुड़पुराण में गजास्य, षण्मुख तथा स्कन्द इन सबका वास्तुपूजित प्रासाद में स्थापित किए जाने का उल्लेख आया है।[21]

निष्कर्षः–

श्री गणेश बुद्धि के कारक माने गए हैं। गणेश को मोदक का भोग लगाकर सम्पादित की जाने वाली पूजा से प्रखर बुद्धि व संकल्प के साथ सुख सफलता

व शान्ति की राह पर अग्रसर होने की प्रेरणा व उर्जा देती है। प्रत्येक शुभ कार्य के प्रारम्भ में गणेश पूजा को अनिवार्य बताया गया है। न केवल मनुष्य अपितु देवगण भी स्वकार्य की निर्विघ्न सिद्धि हेतु गणेशाराधना किया करते हैं। देवगणों द्वारा स्वयमेव उनकी अग्रपूजा का विधान बनाया है। पुराणों में गणेश भक्ति समस्त ग्रह दोष निवाराणार्थ कथित है।

संधर्व सूची

1. प.म.पु., 1/65/1–9
2. शिव पु., 1/16/1–9
3. वही, 1/16/16–20 (पूर्वार्ध)
4. ना.म.पु. (पू.भा.), 68/1–4 (पूर्वार्ध)
5. वही, (पू.भा.), 68/4 (उत्तरार्ध)–14 (पूर्वार्ध)
6. वदेत्तत्पुरुषायांते विद्महेति पदं ततः।।
   वक्रतुण्डाय शब्दांते धीमहीति समीरयेत्।।
   तन्नो दंतिः प्रचोवर्णा दयादिति वदेत्पुनः।। वही, 68/14 (उत्तरार्ध)–15
7. वही, 68/16–28 (पूर्वार्ध)
8. देवाग्रे पूजयेल्लक्ष्मीसहितं तु विनायकम्। वही, 68/28 (उत्तरार्ध)
9. वही, (पू.भा.), 68/29–35
10. भ.म.पु. 29/1–8
11. स्क.पु., 2/64/1–5
12. म.पु., 1/35/21–22
13. वही, 1/43/16
14. वही, 1/43/46
15. वही, 2/72/39
16. वही, 2/76/20
17. वही, 2/122/19
18. गरुड़ पु., 1/131/1
19. नमस्यामि हरिं रुद्रं ब्रह्माण०च गणाधिपम्। वही, 1/1/2
20. वक्ष्ये गणादिकाः पूजाः सर्वदा स्वर्गदाः पराः।
    गणासनं गणमूर्तिं गणाधिपतिमर्च्चयेत!।। वही, 1/24/1
21. वही, 1/45/33